REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514
VOLUME - 8 | ISSUE - 9 | JUNE - 2019

शैक्षणिक अवदान : स्वामी विवेकानन्द

रहितेश्वर राय
स्नातकोत्तर, दर्शनशास्त्र विभाग, ति0मा0 भागलपुर, विश्वविद्यालय

प्रस्तावना –

भारत के नवनिर्माण में समकालीन भारतीय विचारकों में स्वामी विवेकानन्द का नाम अग्रगण्य है। वे समस्त विश्व के लिए अमूल्य पथ निर्देश रहे। भारतीय संस्कृति को विश्व स्तर पर पहचान दिलाने के कारण कई मनीषियों ने उन्हें आधुनिक भारत का स्रष्टा के रूप में स्वीकार किया है। नव जागरण के प्रत्येक क्षेत्र को स्वामी विवेकानन्द ने अपूर्व रूप से प्रभावित किया है। वे एक सन्यासी, दार्शनिक, विचारक होने के साथ–साथ एक महान शिक्षाविद् भी थे। शैक्षणिक जगत में उनके उल्लेखनीय अवदानों को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा वह प्रकिया है जिसके द्वारा व्यक्ति की आन्तरिक पूर्णतः प्रकट होती है।[1]

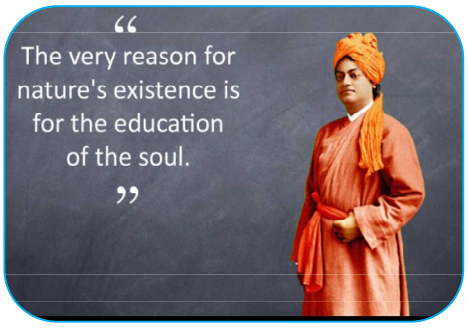

प्रस्तावना –

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा हैं।[2] जब बालक जन्म लेता है तो अनन्त शक्तियाँ उसके अर्न्तमन, में छिपा रहता है उनके कोई भी ज्ञान बाहर से नहीं आता, सब अन्दर ही निहित होता है। केवल शिक्षा के द्वारा बालक के उन्हीं जन्मजात गुणों एवं शक्तियों को प्रस्फुटित किया जाता है। शिक्षा तो एक सुझाव, एक प्रेरक मात्र है जो बालक को अपने ही मन का अध्ययन करने के लिए प्रेरित करता है। अर्थात समस्त ज्ञान, चाहे वह लौकिक हो अथवा आध्यात्मिक, मनुष्य के मन में है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा वह साधन है जिससे मनुष्य का शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक एवं बौद्धिक विकास होता है तथा मनुष्य सत् चित् आनन्दस्वरूप आत्मा को पहचानता है। उनके अनुसार शिक्षा का अर्थ केवल उन सूचनाओं से नहीं है जो बालकों के मस्तिष्क में बलपूर्वक ठूँस दी जाती है। उन्होंने केवल पुस्तकीय ज्ञान को शिक्षा मानने की आलोचना की और कहा कि यदि शिक्षा का अर्थ सूचनाओं से है तो पुस्तकालय संसार का सर्वश्रेष्ठ संत होते तथा विश्वकोष ऋषि। सैद्धान्तिक शिक्षा का खंडन कर व्यावहारिक शिक्षा को मत्वपूर्ण माना। स्वामी जी ने वेदान्त व उपनिषदों को शिक्षा का आधार बतलाया। वे मानते थे कि वेदान्त शाश्वत है जो किसी मनुष्य या पैगम्बर द्वारा रचित नहीं है। वेदान्त के अनुसार माया या अविद्या के करण मनुष्य अपने प्राकृतिक स्वरूप को पहचान नहीं पाता है। शिक्षा का उद्देश्य है उसी आन्रिक पूर्णता का बाह्य प्रकाश। उनका कहना था कि यथार्थ शिक्षा का उद्देश्य मानव सेवा द्वारा ईश्वर की सेवा करना है। शारीरिक विकास पर बल देते हुए वे कहते है कि संसार में यदि कोई पाप है तो वह है ‘दुर्बलता’।

स्वामी जी का विचार है कि ज्ञान की प्राप्ति के लिए एक ही मार्ग है वह है एकाग्रता।[3] एकाग्रता के बिना कोई भी ज्ञान ग्रहण नहीं किया जा सकता है। एकाग्रता ही शिक्षा का सम्पूर्ण सार है। एकाग्रता की शक्ति जितनी अधिक होगी, ज्ञान की प्राप्ति भी उतनी ही अधिक होगी। उनका कहना है कि 90 प्रतिशत विचार शक्ति को साधारण मनुष्य व्यर्थ खो देता है और इसी कारण वह सदा बड़ी–बड़ी गलतियाँ किया करता है।

मनुष्यों और पशुओं में मुख्य भेद केवल चित्त की एकाग्र शक्ति का तारतम्य ही है। निम्न मनुष्य की उच्चतम पुरूष के साथ तुलनात्मक भेद केवल एकाग्रता की मात्रा में है। किसी भी कार्य की सफलता इसी एकाग्रता का फल है। यह एकाग्रता योग में वर्णित चित वृत्ति निरोध के समकक्ष है। स्वामी जी का कहना है कि हमारा मन जब व्यर्थ की चिन्ताओं को छोड़कर किसी विषय पर स्थिर करने का प्रयत्न करता है तब मानसिक एकाग्रता प्राप्त होती है। इस एकग्रता को प्राप्त करने के लिए ब्रह्मचर्य की आवश्यकता होती है। पूर्ण ब्रह्मचर्य से प्रबल बौद्धिक और आध्यात्मिक शक्ति उत्पन्न होती है। प्रत्येक शिक्षार्थी को पूर्ण ब्रह्मचर्य का अभ्यास करने की शिक्षा देनी चाहिए। विवेकानन्द जी का स्पष्ट कहना था कि "मनुष्य जैसा सोचता है वैसा ही बन जाता है।"[4] इसलिए व्यक्ति में आत्मविश्वास की अति आवश्यकता है। श्रद्धा या आत्मविश्वास ही सारी उन्नति का मूल है। स्वामी जी कहते है शक्ति में सदगुण है, कमजोरी में पाप और वही धर्म सीखना चाहिए जो भयमुक्त करें। वे कहा करते थे कि आत्मविश्वास मानवता का सबसे शक्तिशाली अस्त्र है। एक छोटा सा बुलबुला और दूसरा पर्वत समान ऊँची तरंग दोनों के पीछे वही अनन्त सागर है इसलिए तुम अपनी सन्तानों को उसके जन्मकाल से ही इस महान, जीवन प्रद, उच्च एवं उदात्त तत्व की शिक्षा देना शुरू कर दो।[5]

इसके अतिरिक्त शिक्षा में शिक्षक की भी अहम् भूमिका हुआ करती है। स्वामी जी के अनुसार शिक्षक एक पथ प्रदर्शक है जो बालक को अपने ढंग से अग्रसर होने के लिये सहायता प्रदान करता है। स्वामी जी के अनुसार शिक्षक को आध्यात्मिक दृष्टि से दिव्य तथा परिपक्व होना चाहिए तथा धार्मिक ग्रन्थों के सार तत्वों से अवगत होना चाहिये ताकि वह बालक के व्यक्तित्व को गढ़ सके, तथा उसे सही मार्ग पर अग्रसर कर सके। स्वामी जी के अनुसार वास्तविक शिक्षक वही है जो बालक के मानसिक स्तर को पहचान कर शिक्षा दे सके तथा अपनी अन्तरात्मा के विचारों को शिष्य की अन्तरात्मा में प्रविष्ट करा सके। वह बच्चों को स्वतः विकास करने का अवसर दे, बच्चों की एकाग्रता बढ़ाये। उनके विकास मार्ग में आने वाली बाधाओं को हटायें। उनसे स्नेह, प्रेम व सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करें तथा ब्रह्मचर्य, संयम, धैर्य तथा लगन जैसे गुणों का उनके अन्दर विकास करें। इसके लिये एक शिक्षक को सफल मनोवैज्ञानिक भी होना चाहिये जिससे वह अपने छात्रों को पूर्ण रूप से जान सकें। स्वामी जी के अनुसार शिक्षक में त्याग, साहस, उत्साह, विश्वबन्धुत्व जैसे गुण भी होने चाहिये क्योंकि शिक्षक ही है जो भावी भविष्य का निर्माता है।

स्वामी जी कहते है कि अनुशासन का स्वरूप आवश्यकता एवं परिस्थिति के अनुरूप होना चाहिये। यह स्वरूप मुक्तयात्मक भी हो सकता है और प्रभावात्मक भी। स्वामी जी बालक को शारीरिक दण्ड देने के प्रबल विरोधी थे। भारतीय आदर्शवादी विचारक होने के कारण वह आत्मानुशासन पर विशेष बल देते थे व चरित्र निर्माण को अनुशासन का एक महत्वपूर्ण स्थान मानते थे। स्वामी जी ने भारतीयों को वीर, कर्मठ तथा निर्भय बनने का सुझाव देते हुए कहा–वीर बनों, हमेशा कहो, मैं निर्भय हूँ। सबसे कहो–डरो मत भय मृत्यु है, भय पाप है, नर्क है, भय अधर्मिकता है, तथा भय का जीवन में कोई स्थान नहीं है। उन दिनों शिक्षा जनसाधारण को सुलभ नहीं थी। इसका क्षेत्र केवल समर्थ व्यक्तियों तक सीमित था। अतः उन्होंने कहा– मैं जन साधारण की अवहेलना करना महान राष्ट्रीय पाप समझता हूँ। यह हमारे पतन का मुख्य कारण है। जब तक भारत की सामान्य जनता को एक बार फिर उपर्युक्त शिक्षा, अच्छज्ञ भोजन तथा अच्छी सुरक्षा नहीं प्रदान की जायेगी तब तक प्रत्येक राजनीति बेकार सिद्ध होंगी। वह कहते हैं जनसाधारण को ऊपर उठाओ, शिक्षित करो, तभी यह देश यथार्थ में राष्ट्र के रूप में खड़ा हो सकेगा। उनका कहना था मानवता का आदर करो, गिरे हुए लोगों को आगे बढ़ने का अवसर दो, शिक्षा कोई एकाधिकार की वस्तु नहीं

है, उसे सर्वसाधारण तक पहुँचाने की व्यवस्था करो। जब तक जन साधरण शिक्षित नहीं होगा वह क्रूर समाज के हाथों शोषित होता रहेगा और अवनति के गर्त में दिन–प्रतिदिन नीचे जाता रहेगा। जनशिक्षा मातृभाषा के माध्यम से दी जानी चाहिये तथा जनता को शिक्षित करने के लिए घर–घर जाकर शिक्षा देनी होगी। जन शिक्षा के सम्बन्ध में स्वामी जी जोर देते हुए कहते हैं जब तक करोड़ों व्यक्ति भूख तथा अज्ञानता से पीड़ित रहेंगे, तब तक मैं ऐसे प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति को विश्वासघाती कहूँगा जिसने गरीबों के धन की सहायता से शिक्षा पाई है।

स्वामी जी कहते हैं कि जनसाधारण में स्त्रियों की शिक्षा का प्रसार किये बिना उन्नति का कोई उपाय नहीं है। उनके लिये ऐसी शिक्षा हो जो उन्हें एक आदर्श माँ, आदर्श गृहिणी तथा साहसी बना सके, जो अपने आपको समझे, अपनी समस्याओं को सुलझा सके, बच्चों का न केवल भरण–पोषण कर सकें वरण उनमें उत्तम संस्कारों का बीजारोपण कर सके एवं स्वयं आत्मनिर्भर बन सके। स्वामी विवेकानन्द शिक्षा के द्वारा राष्ट्र पुनर्निर्माण की दिशा में पहला कदम है शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार। यदि वह अपने राष्ट्र को महान बनाना चाहते हैं तो निम्न बातों पर अमल करना होगा।

1. अन्तरात्मा पर अडिग श्रद्धा।
2. भय, कुंठा, ईर्ष्या से मुक्ति।
3. आत्मनिर्भरता एवं चरित्र–गठन के लिए शिक्षा।
4. विज्ञान एवं तकनीकी का संगम।

अतः हम कह सकते है कि स्वामी विवेकानन्द का जीवन दर्शन अत्यन्त ही व्यापक, विस्तृत और समन्वयवादी था। इनका दर्शन भूतकाल एवं वर्तमान भारत के बीच सेतु के रूप में है। वे चाहते थे कि भारतवासी पाश्चात्य विज्ञान और तकनीकी पर प्रभुत्व प्राप्त करें एवं अपनी आर्थिक दशा सुधारें, किन्तु उन्होंने कहा कि हमें मशीनों का शासक होना चाहिए न कि गुलाम"।6 स्वामी जी भारत की आदर्श परायणता के साथ ही पाश्चात्य की कर्मकुशलता का समन्वय करना चाहते थे। एक वाक्य में कह तो "शिक्षा के माध्यम से धर्म एवं विज्ञान का समन्वय हो"7 पुस्तकीय ज्ञान को शिक्षा न मानकर स्वामी जी ने क्रियात्मक ज्ञान की अनुभूति को ही शिक्षा माना है जो कर्म, भक्ति व ज्ञान की प्राचीन संस्कृति को परिलक्षित करती है। स्वामी जी के भाषणों से सम्पूर्ण विश्व को यह ज्ञात हुआ कि भारत में अध्यात्म एवं दर्शन की परम्परा जीवित है।

निष्कर्षतः हम कह सकते है कि भारत के नव निर्माण में उन्होंने जो शिक्षा के सम्बंध में विचार हमारे सम्मुख रखे यदि उन्हें अपना लिया जाए तो हमारी शिक्षा प्रणाली में अभूतपूर्व सुधार हो सकता है और व्यक्ति के सर्वतोमुखी विकास से मानव–निर्माण शिक्षा ;डंद.डांपदह म्कनबंजपवदद्ध प्रतिष्ठित हो सकेगा।

संदर्भ सूचीः

1. शिक्षा के दार्शनिक तथा सामाजिक आधार, डॉ॰ एस.एस. माथुर, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, 2015, पृष्ठ–329.
2. शिक्षा, स्वामी विवेकानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर, 1998,पृष्ठ–1
3. वही पृष्ठ–8
4. वही पृष्ठ–11.
5. वही पृष्ठ–12.
6. शिक्षा के दार्शनिक तथा सामाजिक आधार पृष्ठ–329.
7. स्वामी विवेकानन्द और उनका संदेश, रामकृष्ण मिशन इन्स्टीट्यूट ऑफ कल्चर, कोलकाता, 2008, पृष्ठ–18.